किष्किन्धा काण्ड

।।राम।।
श्रीगणेशाय नमः
श्रीजानकीवल्लभो विजयते
श्रीरामचरितमानस
चतुर्थ सोपान
(किष्किन्धाकाण्ड)
श्लोक
कुन्देन्दीवरसुन्दरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ शोभाढ्यौ वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृन्दप्रियौ। मायामानुषरूपिणौ रघुवरौ सद्धर्मवर्मौं हितौ सीतान्वेषणतत्परौ पथिगतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः।।1।।
ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं
श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरे संशोभितं सर्वदा।
संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम्।।2।।
सो0-मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर
जहँ बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न।।
जरत सकल सुर बृंद बिषम गरल जेहिं पान किय।
तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस।।
आगें चले बहुरि रघुराया। रिष्यमूक परवत निअराया।।
तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा। आवत देखि अतुल बल सींवा।।
अति सभीत कह सुनु हनुमाना। पुरुष जुगल बल रूप निधाना।।
धरि बटु रूप देखु तैं जाई। कहेसु जानि जियँ सयन बुझाई।।
पठए बालि होहिं मन मैला। भागौं तुरत तजौं यह सैला।।
बिप्र रूप धरि कपि तहँ गयऊ। माथ नाइ पूछत अस भयऊ।।
को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा। छत्री रूप फिरहु बन बीरा।।
कठिन भूमि कोमल पद गामी। कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी।।
मृदुल मनोहर सुंदर गाता। सहत दुसह बन आतप बाता।।
की तुम्ह तीनि देव महँ कोऊ। नर नारायन की तुम्ह दोऊ।।
दो0-जग कारन तारन भव भंजन धरनी भार।
की तुम्ह अकिल भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार।।1।।
–*–*–

कोसलेस दसरथ के जाए । हम पितु बचन मानि बन आए।।
नाम राम लछिमन दौउ भाई। संग नारि सुकुमारि सुहाई।।
इहाँ हरि निसिचर बैदेही। बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही।।
आपन चरित कहा हम गाई। कहहु बिप्र निज कथा बुझाई।।
प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना। सो सुख उमा नहिं बरना।।
पुलकित तन मुख आव न बचना। देखत रुचिर बेष कै रचना।।
पुनि धीरजु धरि अस्तुति कीन्ही। हरष हृदयँ निज नाथहि चीन्ही।।
मोर न्याउ मैं पूछा साईं। तुम्ह पूछहु कस नर की नाईं।।
तव माया बस फिरउँ भुलाना। ता ते मैं नहिं प्रभु पहिचाना।।
दो0-एकु मैं मंद मोहबस कुटिल हृदय अग्यान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबंधु भगवान।।2।।

–*–*–

जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें। सेवक प्रभुहि परै जनि भोरें।।
नाथ जीव तव मायाँ मोहा। सो निस्तरइ तुम्हारेहिं छोहा।।
ता पर मैं रघुबीर दोहाई। जानउँ नहिं कछु भजन उपाई।।
सेवक सुत पति मातु भरोसें। रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें।।
अस कहि परेउ चरन अकुलाई। निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई।।
तब रघुपति उठाइ उर लावा। निज लोचन जल सींचि जुड़ावा।।
सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना। तैं मम प्रिय लछिमन ते दूना।।
समदरसी मोहि कह सब कोऊ। सेवक प्रिय अनन्यगति सोऊ।।
दो0-सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत।।3।।
–*–*–

देखि पवन सुत पति अनुकूला। हृदयँ हरष बीती सब सूला।।
नाथ सैल पर कपिपति रहई। सो सुग्रीव दास तव अहई।।
तेहि सन नाथ मयत्री कीजे। दीन जानि तेहि अभय करीजे।।
सो सीता कर खोज कराइहि। जहँ तहँ मरकट कोटि पठाइहि।।
एहि बिधि सकल कथा समुझाई। लिए दुऔ जन पीठि चढ़ाई।।
जब सुग्रीवँ राम कहुँ देखा। अतिसय जन्म धन्य करि लेखा।।
सादर मिलेउ नाइ पद माथा। भैंटेउ अनुज सहित रघुनाथा।।
कपि कर मन बिचार एहि रीती। करिहहिं बिधि मो सन ए प्रीती।।
दो0-तब हनुमंत उभय दिसि की सब कथा सुनाइ।।
पावक साखी देइ करि जोरी प्रीती दृढ़ाइ।।4।।
–*–*–

कीन्ही प्रीति कछु बीच न राखा। लछमिन राम चरित सब भाषा।।
कह सुग्रीव नयन भरि बारी। मिलिहि नाथ मिथिलेसकुमारी।।
मंत्रिन्ह सहित इहाँ एक बारा। बैठ रहेउँ मैं करत बिचारा।।
गगन पंथ देखी मैं जाता। परबस परी बहुत बिलपाता।।
राम राम हा राम पुकारी। हमहि देखि दीन्हेउ पट डारी।।
मागा राम तुरत तेहिं दीन्हा। पट उर लाइ सोच अति कीन्हा।।
कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा। तजहु सोच मन आनहु धीरा।।
सब प्रकार करिहउँ सेवकाई। जेहि बिधि मिलिहि जानकी आई।।
दो0-सखा बचन सुनि हरषे कृपासिधु बलसींव।
कारन कवन बसहु बन मोहि कहहु सुग्रीव ।।5।।
–*–*–

नात बालि अरु मैं द्वौ भाई। प्रीति रही कछु बरनि न जाई।।
मय सुत मायावी तेहि नाऊँ। आवा सो प्रभु हमरें गाऊँ।।
अर्ध राति पुर द्वार पुकारा। बाली रिपु बल सहै न पारा।।
धावा बालि देखि सो भागा। मैं पुनि गयउँ बंधु सँग लागा।।
गिरिबर गुहाँ पैठ सो जाई। तब बालीं मोहि कहा बुझाई।।
परिखेसु मोहि एक पखवारा। नहिं आवौं तब जानेसु मारा।।
मास दिवस तहँ रहेउँ खरारी। निसरी रुधिर धार तहँ भारी।।
बालि हतेसि मोहि मारिहि आई। सिला देइ तहँ चलेउँ पराई।।
मंत्रिन्ह पुर देखा बिनु साईं। दीन्हेउ मोहि राज बरिआई।।
बालि ताहि मारि गृह आवा। देखि मोहि जियँ भेद बढ़ावा।।
रिपु सम मोहि मारेसि अति भारी। हरि लीन्हेसि सर्बसु अरु नारी।।
ताकें भय रघुबीर कृपाला। सकल भुवन मैं फिरेउँ बिहाला।।

इहाँ साप बस आवत नाहीं। तदपि सभीत रहउँ मन माहीँ।।
सुनि सेवक दुख दीनदयाला। फरकि उठीं द्वै भुजा बिसाला।।
दो0- सुनु सुग्रीव मारिहउँ बालिहि एकहिं बान।
ब्रम्ह रुद्र सरनागत गएँ न उबरिहिं प्रान।।6।।
–*–*–

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी।।
निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्रक दुख रज मेरु समाना।।
जिन्ह कें असि मति सहज न आई। ते सठ कत हठि करत मिताई।।
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रगटे अवगुनन्हि दुरावा।।
देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई।।
बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा।।
आगें कह मृदु बचन बनाई। पाछें अनहित मन कुटिलाई।।
जा कर चित अहि गति सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहि भलाई।।
सेवक सठ नृप कृपन कुनारी। कपटी मित्र सूल सम चारी।।
सखा सोच त्यागहु बल मोरें। सब बिधि घटब काज मैं तोरें।।
कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा। बालि महाबल अति रनधीरा।।
दुंदुभी अस्थि ताल देखराए। बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाए।।
देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती। बालि बधब इन्ह भइ परतीती।।
बार बार नावइ पद सीसा। प्रभुहि जानि मन हरष कपीसा।।
उपजा ग्यान बचन तब बोला। नाथ कृपाँ मन भयउ अलोला।।
सुख संपति परिवार बड़ाई। सब परिहरि करिहउँ सेवकाई।।
ए सब रामभगति के बाधक। कहहिं संत तब पद अवराधक।।
सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं। माया कृत परमारथ नाहीं।।
बालि परम हित जासु प्रसादा। मिलेहु राम तुम्ह समन बिषादा।।
सपनें जेहि सन होइ लराई। जागें समुझत मन सकुचाई।।
अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती। सब तजि भजनु करौं दिन राती।।
सुनि बिराग संजुत कपि बानी। बोले बिहँसि रामु धनुपानी।।
जो कछु कहेहु सत्य सब सोई। सखा बचन मम मृषा न होई।।
नट मरकट इव सबहि नचावत। रामु खगेस बेद अस गावत।।
लै सुग्रीव संग रघुनाथा। चले चाप सायक गहि हाथा।।
तब रघुपति सुग्रीव पठावा। गर्जेसि जाइ निकट बल पावा।।
सुनत बालि क्रोधातुर धावा। गहि कर चरन नारि समुझावा।।
सुनु पति जिन्हहि मिलेउ सुग्रीवा। ते द्वौ बंधु तेज बल सींवा।।
कोसलेस सुत लछिमन रामा। कालहु जीति सकहिं संग्रामा।।
दो0-कह बालि सुनु भीरु प्रिय समदरसी रघुनाथ।
जौं कदाचि मोहि मारहिं तौ पुनि होउँ सनाथ।।7।।
–*–*–

अस कहि चला महा अभिमानी। तृन समान सुग्रीवहि जानी।।
भिरे उभौ बाली अति तर्जा । मुठिका मारि महाधुनि गर्जा।।
तब सुग्रीव बिकल होइ भागा। मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा।।
मैं जो कहा रघुबीर कृपाला। बंधु न होइ मोर यह काला।।
एकरूप तुम्ह भ्राता दोऊ। तेहि भ्रम तें नहिं मारेउँ सोऊ।।
कर परसा सुग्रीव सरीरा। तनु भा कुलिस गई सब पीरा।।
मेली कंठ सुमन कै माला। पठवा पुनि बल देइ बिसाला।।
पुनि नाना बिधि भई लराई। बिटप ओट देखहिं रघुराई।।
दो0-बहु छल बल सुग्रीव कर हियँ हारा भय मानि।

मारा बालि राम तब हृदय माझ सर तानि।।8।।
–*–*–

परा बिकल महि सर के लागें। पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगें।।
स्याम गात सिर जटा बनाएँ। अरुन नयन सर चाप चढ़ाएँ।।
पुनि पुनि चितइ चरन चित दीन्हा। सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हा।।
हृदयँ प्रीति मुख बचन कठोरा। बोला चितइ राम की ओरा।।
धर्म हेतु अवतरेहु गोसाई। मारेहु मोहि ब्याध की नाई।।
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कबन नाथ मोहि मारा।।
अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।
इन्हहि कुद्दष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई।।
मुढ़ तोहि अतिसय अभिमाना। नारि सिखावन करसि न काना।।
मम भुज बल आश्रित तेहि जानी। मारा चहसि अधम अभिमानी।।
दो0-सुनहु राम स्वामी सन चल न चातुरी मोरि।
प्रभु अजहूँ मैं पापी अंतकाल गति तोरि।।9।।
–*–*–

सुनत राम अति कोमल बानी। बालि सीस परसेउ निज पानी।।
अचल करौं तनु राखहु प्राना। बालि कहा सुनु कृपानिधाना।।
जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं।।
जासु नाम बल संकर कासी। देत सबहि सम गति अविनासी।।
मम लोचन गोचर सोइ आवा। बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा।।
छं0-सो नयन गोचर जासु गुन नित नेति कहि श्रुति गावहीं।
जिति पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबहुँक पावहीं।।
मोहि जानि अति अभिमान बस प्रभु कहेउ राखु सरीरही।
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि करिहि बबूरही।।1।।
अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर मागऊँ।
जेहिं जोनि जन्मौं कर्म बस तहँ राम पद अनुरागऊँ।।
यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिऐ।
गहि बाहँ सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिऐ।।2।।
दो0-राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग।।10।।
–*–*–

राम बालि निज धाम पठावा। नगर लोग सब ब्याकुल धावा।।
नाना बिधि बिलाप कर तारा। छूटे केस न देह सँभारा।।
तारा बिकल देखि रघुराया । दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया।।
छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।।
प्रगट सो तनु तव आगें सोवा। जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा।।
उपजा ग्यान चरन तब लागी। लीन्हेसि परम भगति बर मागी।।
उमा दारु जोषित की नाई। सबहि नचावत रामु गोसाई।।
तब सुग्रीवहि आयसु दीन्हा। मृतक कर्म बिधिबत सब कीन्हा।।
राम कहा अनुजहि समुझाई। राज देहु सुग्रीवहि जाई।।
रघुपति चरन नाइ करि माथा। चले सकल प्रेरित रघुनाथा।।
दो0-लछिमन तुरत बोलाए पुरजन बिप्र समाज।
राजु दीन्ह सुग्रीव कहँ अंगद कहँ जुबराज।।11।।
–*–*–

उमा राम सम हित जग माहीं। गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं।।
सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती।।

बालि त्रास ब्याकुल दिन राती। तन बहु ब्रन चिंताँ जर छाती।।
सोइ सुग्रीव कीन्ह कपिराऊ। अति कृपाल रघुबीर सुभाऊ।।
जानतहुँ अस प्रभु परिहरहीं। काहे न बिपति जाल नर परहीं।।
पुनि सुग्रीवहि लीन्ह बोलाई। बहु प्रकार नृपनीति सिखाई।।
कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीसा। पुर न जाउँ दस चारि बरीसा।।
गत ग्रीषम बरषा रितु आई। रहिहउँ निकट सैल पर छाई।।
अंगद सहित करहु तुम्ह राजू। संतत हृदय धरेहु मम काजू।।
जब सुग्रीव भवन फिरि आए। रामु प्रबरषन गिरि पर छाए।।
दो0-प्रथमहिं देवन्ह गिरि गुहा राखेउ रुचिर बनाइ।
राम कृपानिधि कछु दिन बास करहिंगे आइ।।12।।
–*–*–

सुंदर बन कुसुमित अति सोभा। गुंजत मधुप निकर मधु लोभा।।
कंद मूल फल पत्र सुहाए। भए बहुत जब ते प्रभु आए ।।
देखि मनोहर सैल अनूपा। रहे तहँ अनुज सहित सुरभूपा।।
मधुकर खग मृग तनु धरि देवा। करहिं सिद्ध मुनि प्रभु कै सेवा।।
मंगलरुप भयउ बन तब ते । कीन्ह निवास रमापति जब ते।।
फटिक सिला अति सुभ्र सुहाई। सुख आसीन तहाँ द्वौ भाई।।
कहत अनुज सन कथा अनेका। भगति बिरति नृपनीति बिबेका।।
बरषा काल मेघ नभ छाए। गरजत लागत परम सुहाए।।
दो0- लछिमन देखु मोर गन नाचत बारिद पैखि।
गृही बिरति रत हरष जस बिष्नु भगत कहुँ देखि।।13।।
–*–*–

घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रिया हीन डरपत मन मोरा।।
दामिनि दमक रह न घन माहीं। खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं।।
बरषहिं जलद भूमि निअराएँ। जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ।।
बूँद अघात सहहिं गिरि कैंसें । खल के बचन संत सह जैसें।।
छुद्र नदीं भरि चलीं तोराई। जस थोरेहुँ धन खल इतराई।।
भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी।।
समिटि समिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा।।
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई। होई अचल जिमि जिव हरि पाई।।
दो0- हरित भूमि तृन संकुल समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बाद तें गुप्त होहिं सदग्रंथ।।14।।
–*–*–

दादुर धुनि चहु दिसा सुहाई। बेद पढ़हिं जनु बटु समुदाई।।
नव पल्लव भए बिटप अनेका। साधक मन जस मिलें बिबेका।।
अर्क जबास पात बिनु भयऊ। जस सुराज खल उद्यम गयऊ।।
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी। करइ क्रोध जिमि धरमहि दूरी।।
ससि संपन्न सोह महि कैसी। उपकारी कै संपति जैसी।।
निसि तम घन खद्योत बिराजा। जनु दंभिन्ह कर मिला समाजा।।
महाबृष्टि चलि फूटि किआरीं । जिमि सुतंत्र भएँ बिगरहिं नारीं।।
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना।।
देखिअत चक्रबाक खग नाहीं। कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं।।
ऊषर बरषइ तृन नहिं जामा। जिमि हरिजन हियँ उपज न कामा।।
बिबिध जंतु संकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा।।
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इंद्रिय गन उपजें ग्याना।।
दो0-कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।

जिमि कपूत के उपजें कुल सद्धर्म नसाहिं।।15(क)।।
कबहुँ दिवस महँ निबिड़ तम कबहुँक प्रगट पतंग।
बिनसइ उपजइ ग्यान जिमि पाइ कुसंग सुसंग।।15(ख)।।
–*–*–

बरषा बिगत सरद रितु आई। लछिमन देखहु परम सुहाई।।
फूलें कास सकल महि छाई। जनु बरषाँ कृत प्रगट बुढ़ाई।।
उदित अगस्ति पंथ जल सोषा। जिमि लोभहि सोषइ संतोषा।।
सरिता सर निर्मल जल सोहा। संत हृदय जस गत मद मोहा।।
रस रस सूख सरित सर पानी। ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी।।
जानि सरद रितु खंजन आए। पाइ समय जिमि सुकृत सुहाए।।
पंक न रेनु सोह असि धरनी। नीति निपुन नृप कै जसि करनी।।
जल संकोच बिकल भइँ मीना। अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना।।
बिनु धन निर्मल सोह अकासा। हरिजन इव परिहरि सब आसा।।
कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी। कोउ एक पाव भगति जिमि मोरी।।
दो0-चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारि।
जिमि हरिभगत पाइ श्रम तजहि आश्रमी चारि।।16।।
–*–*–

सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरि सरन न एकउ बाधा।।
फूलें कमल सोह सर कैसा। निर्गुन ब्रम्ह सगुन भएँ जैसा।।
गुंजत मधुकर मुखर अनूपा। सुंदर खग रव नाना रूपा।।
चक्रबाक मन दुख निसि पैखी। जिमि दुर्जन पर संपति देखी।।
चातक रटत तृषा अति ओही। जिमि सुख लहइ न संकरद्रोही।।
सरदातप निसि ससि अपहरई। संत दरस जिमि पातक टरई।।
देखि इंदु चकोर समुदाई। चितवतहिं जिमि हरिजन हरि पाई।।
मसक दंस बीते हिम त्रासा। जिमि द्विज द्रोह किएँ कुल नासा।।
दो0-भूमि जीव संकुल रहे गए सरद रितु पाइ।
सदगुर मिले जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदाइ।।17।।
–*–*–

बरषा गत निर्मल रितु आई। सुधि न तात सीता कै पाई।।
एक बार कैसेहुँ सुधि जानौं। कालहु जीत निमिष महुँ आनौं।।
कतहुँ रहउ जौं जीवति होई। तात जतन करि आनेउँ सोई।।
सुग्रीवहुँ सुधि मोरि बिसारी। पावा राज कोस पुर नारी।।
जेहिं सायक मारा मैं बाली। तेहिं सर हतौं मूढ़ कहँ काली।।
जासु कृपाँ छूटहीं मद मोहा। ता कहुँ उमा कि सपनेहुँ कोहा।।
जानहिं यह चरित्र मुनि ग्यानी। जिन्ह रघुबीर चरन रति मानी।।
लछिमन क्रोधवंत प्रभु जाना। धनुष चढ़ाइ गहे कर बाना।।
दो0-तब अनुजहि समुझावा रघुपति करुना सींव।।
भय देखाइ लै आवहु तात सखा सुग्रीव।।18।।
–*–*–

इहाँ पवनसुत हृदयँ बिचारा। राम काजु सुग्रीवँ बिसारा।।
निकट जाइ चरनन्हि सिरु नावा। चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा।।
सुनि सुग्रीवँ परम भय माना। बिषयँ मोर हरि लीन्हेउ ग्याना।।
अब मारुतसुत दूत समूहा। पठवहु जहँ तहँ बानर जूहा।।
कहहु पाख महुँ आव न जोई। मोरें कर ता कर बध होई।।
तब हनुमंत बोलाए दूता। सब कर करि सनमान बहूता।।
भय अरु प्रीति नीति देखाई। चले सकल चरनन्हि सिर नाई।।

एहि अवसर लछिमन पुर आए। क्रोध देखि जहँ तहँ कपि धाए।।
दो0-धनुष चढ़ाइ कहा तब जारि करउँ पुर छार।
ब्याकुल नगर देखि तब आयउ बालिकुमार।।19।।
–*–*–

चरन नाइ सिरु बिनती कीन्ही। लछिमन अभय बाँह तेहि दीन्ही।।
क्रोधवंत लछिमन सुनि काना। कह कपीस अति भयँ अकुलाना।।
सुनु हनुमंत संग लै तारा। करि बिनती समुझाउ कुमारा।।
तारा सहित जाइ हनुमाना। चरन बंदि प्रभु सुजस बखाना।।
करि बिनती मंदिर लै आए। चरन पखारि पलँग बैठाए।।
तब कपीस चरनन्हि सिरु नावा। गहि भुज लछिमन कंठ लगावा।।
नाथ बिषय सम मद कछु नाहीं। मुनि मन मोह करइ छन माहीं।।
सुनत बिनीत बचन सुख पावा। लछिमन तेहि बहु बिधि समुझावा।।
पवन तनय सब कथा सुनाई। जेहि बिधि गए दूत समुदाई।।
दो0-हरषि चले सुग्रीव तब अंगदादि कपि साथ।
रामानुज आगें करि आए जहँ रघुनाथ।।20।।
–*–*–

नाइ चरन सिरु कह कर जोरी। नाथ मोहि कछु नाहिन खोरी।।
अतिसय प्रबल देव तब माया। छूटइ राम करहु जौं दाया।।
बिषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी। मैं पावँर पसु कपि अति कामी।।
नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जागा।।
लोभ पाँस जेहिं गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुराया।।
यह गुन साधन तें नहिं होई। तुम्हरी कृपाँ पाव कोइ कोई।।
तब रघुपति बोले मुसकाई। तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भाई।।
अब सोइ जतनु करहु मन लाई। जेहि बिधि सीता कै सुधि पाई।।
दो0- एहि बिधि होत बतकही आए बानर जूथ।
नाना बरन सकल दिसि देखिअ कीस बरुथ।।21।।
–*–*–

बानर कटक उमा में देखा। सो मूरुख जो करन चह लेखा।।
आइ राम पद नावहिं माथा। निरखि बदनु सब होहिं सनाथा।।
अस कपि एक न सेना माहीं। राम कुसल जेहि पूछी नाहीं।।
यह कछु नहिं प्रभु कइ अधिकाई। बिस्वरूप ब्यापक रघुराई।।
ठाढ़े जहँ तहँ आयसु पाई। कह सुग्रीव सबहि समुझाई।।
राम काजु अरु मोर निहोरा। बानर जूथ जाहु चहुँ ओरा।।
जनकसुता कहुँ खोजहु जाई। मास दिवस महँ आएहु भाई।।
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाएँ। आवइ बनिहि सो मोहि मराएँ।।
दो0- बचन सुनत सब बानर जहँ तहँ चले तुरंत ।
तब सुग्रीवँ बोलाए अंगद नल हनुमंत।।22।।
–*–*–

सुनहु नील अंगद हनुमाना। जामवंत मतिधीर सुजाना।।
सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू। सीता सुधि पूँछेउ सब काहू।।
मन क्रम बचन सो जतन बिचारेहु। रामचंद्र कर काजु सँवारेहु।।
भानु पीठि सेइअ उर आगी। स्वामिहि सर्ब भाव छल त्यागी।।
तजि माया सेइअ परलोका। मिटहिं सकल भव संभव सोका।।
देह धरे कर यह फलु भाई। भजिअ राम सब काम बिहाई।।
सोइ गुनग्य सोई बड़भागी । जो रघुबीर चरन अनुरागी।।
आयसु मागि चरन सिरु नाई। चले हरषि सुमिरत रघुराई।।

पाछें पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोलावा।।
परसा सीस सरोरुह पानी। करमुद्रिका दीन्हि जन जानी।।
बहु प्रकार सीतहि समुझाएहु। कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आएहु।।
हनुमत जन्म सुफल करि माना। चलेउ हृदयँ धरि कृपानिधाना।।
जद्यपि प्रभु जानत सब बाता। राजनीति राखत सुरत्राता।।
दो0-चले सकल बन खोजत सरिता सर गिरि खोह।
राम काज लयलीन मन बिसरा तन कर छोह।।23।।
–*–*–

कतहुँ होइ निसिचर सैं भेटा। प्रान लेहिं एक एक चपेटा।।
बहु प्रकार गिरि कानन हेरहिं। कोउ मुनि मिलत ताहि सब घेरहिं।।
लागि तृषा अतिसय अकुलाने। मिलइ न जल घन गहन भुलाने।।
मन हनुमान कीन्ह अनुमाना। मरन चहत सब बिनु जल पाना।।
चढ़ि गिरि सिखर चहूँ दिसि देखा। भूमि बिबिर एक कौतुक पेखा।।
चक्रबाक बक हंस उड़ाहीं। बहुतक खग प्रबिसहिं तेहि माहीं।।
गिरि ते उतरि पवनसुत आवा। सब कहुँ लै सोइ बिबर देखावा।।
आगें कै हनुमंतहि लीन्हा। पैठे बिबर बिलंबु न कीन्हा।।
दो0-दीख जाइ उपवन बर सर बिगसित बहु कंज।
मंदिर एक रुचिर तहँ बैठि नारि तप पुंज।।24।।
–*–*–

दूरि ते ताहि सबन्हि सिर नावा। पूछें निज बृत्तांत सुनावा।।
तेहिं तब कहा करहु जल पाना। खाहु सुरस सुंदर फल नाना।।
मज्जनु कीन्ह मधुर फल खाए। तासु निकट पुनि सब चलि आए।।
तेहिं सब आपनि कथा सुनाई। मैं अब जाब जहाँ रघुराई।।
मूदहु नयन बिबर तजि जाहू। पैहहु सीतहि जनि पछिताहू।।
नयन मूदि पुनि देखहिं बीरा। ठाढ़े सकल सिंधु कें तीरा।।
सो पुनि गई जहाँ रघुनाथा। जाइ कमल पद नाएसि माथा।।
नाना भाँति बिनय तेहिं कीन्ही। अनपायनी भगति प्रभु दीन्ही।।
दो0-बदरीबन कहुँ सो गई प्रभु अग्या धरि सीस ।
उर धरि राम चरन जुग जे बंदत अज ईस।।25।।
–*–*–

इहाँ बिचारहिं कपि मन माहीं। बीती अवधि काज कछु नाहीं।।
सब मिलि कहहिं परस्पर बाता। बिनु सुधि लएँ करब का भ्राता।।
कह अंगद लोचन भरि बारी। दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी।।
इहाँ न सुधि सीता कै पाई। उहाँ गएँ मारिहि कपिराई।।
पिता बधे पर मारत मोही। राखा राम निहोर न ओही।।
पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं। मरन भयउ कछु संसय नाहीं।।
अंगद बचन सुनत कपि बीरा। बोलि न सकहिं नयन बह नीरा।।
छन एक सोच मगन होइ रहे। पुनि अस वचन कहत सब भए।।
हम सीता कै सुधि लिन्हें बिना। नहिं जैंहैं जुबराज प्रबीना।।
अस कहि लवन सिंधु तट जाई। बैठे कपि सब दर्भ डसाई।।
जामवंत अंगद दुख देखी। कहिं कथा उपदेस बिसेषी।।
तात राम कहुँ नर जनि मानहु। निर्गुन ब्रम्ह अजित अज जानहु।।
दो0-निज इच्छा प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्यागि।।26।।
–*–*–

एहि बिधि कथा कहहि बहु भाँती गिरि कंदराँ सुनी संपाती।।

बाहेर होइ देखि बहु कीसा। मोहि अहार दीन्ह जगदीसा।।
आजु सबहि कहँ भच्छन करऊँ। दिन बहु चले अहार बिनु मरऊँ।।
कबहुँ न मिल भरि उदर अहारा। आजु दीन्ह बिधि एकहिं बारा।।
डरपे गीध बचन सुनि काना। अब भा मरन सत्य हम जाना।।
कपि सब उठे गीध कहँ देखी। जामवंत मन सोच बिसेषी।।
कह अंगद बिचारि मन माहीं। धन्य जटायू सम कोउ नाहीं।।
राम काज कारन तनु त्यागी । हरि पुर गयउ परम बड़ भागी।।
सुनि खग हरष सोक जुत बानी । आवा निकट कपिन्ह भय मानी।।
तिन्हहि अभय करि पूछेसि जाई। कथा सकल तिन्ह ताहि सुनाई।।
सुनि संपाति बंधु कै करनी। रघुपति महिमा बधुबिधि बरनी।।
दो0- मोहि लै जाहु सिंधुतट देउँ तिलांजलि ताहि ।
बचन सहाइ करवि मैं पैहहु खोजहु जाहि ।।27।।
–*–*–

अनुज क्रिया करि सागर तीरा। कहि निज कथा सुनहु कपि बीरा।।
हम द्वौ बंधु प्रथम तरुनाई । गगन गए रबि निकट उडाई।।
तेज न सहि सक सो फिरि आवा । मै अभिमानी रबि निअरावा ।।
जरे पंख अति तेज अपारा । परेउँ भूमि करि घोर चिकारा ।।
मुनि एक नाम चंद्रमा ओही। लागी दया देखी करि मोही।।
बहु प्रकार तेंहि ग्यान सुनावा । देहि जनित अभिमानी छड़ावा ।।
त्रेताँ ब्रह्म मनुज तनु धरिही। तासु नारि निसिचर पति हरिही।।
तासु खोज पठइहि प्रभू दूता। तिन्हहि मिलें तैं होब पुनीता।।
जमिहहिं पंख करसि जनि चिंता । तिन्हहि देखाइ देहेसु तैं सीता।।
मुनि कइ गिरा सत्य भइ आजू । सुनि मम बचन करहु प्रभु काजू।।
गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका । तहँ रह रावन सहज असंका ।।
तहँ असोक उपबन जहँ रहई ।। सीता बैठि सोच रत अहई।।
दो-मैं देखउँ तुम्ह नाहि गीघहि दष्टि अपार।।
बूढ भयउँ न त करतेउँ कछुक सहाय तुम्हार।।28।।
जो नाघइ सत जोजन सागर । करइ सो राम काज मति आगर ।।
मोहि बिलोकि धरहु मन धीरा । राम कृपाँ कस भयउ सरीरा।।
पापिउ जा कर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं।।
तासु दूत तुम्ह तजि कदराई। राम हृदयँ धरि करहु उपाई।।
अस कहि गरुड़ गीध जब गयऊ। तिन्ह कें मन अति बिसमय भयऊ।।
निज निज बल सब काहूँ भाषा। पार जाइ कर संसय राखा।।
जरठ भयउँ अब कहइ रिछेसा। नहिं तन रहा प्रथम बल लेसा।।
जबहिं त्रिबिक्रम भए खरारी। तब मैं तरुन रहेउँ बल भारी।।
दो0-बलि बाँधत प्रभु बाढेउ सो तनु बरनि न जाई।
उभय धरी महँ दीन्ही सात प्रदच्छिन धाइ।।29।।
–*–*–

अंगद कहइ जाउँ मैं पारा। जियँ संसय कछु फिरती बारा।।
जामवंत कह तुम्ह सब लायक। पठइअ किमि सब ही कर नायक।।
कहइ रीछपति सुनु हनुमाना। का चुप साधि रहेहु बलवाना।।
पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।।
कवन सो काज कठिन जग माहीं। जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं।।
राम काज लगि तब अवतारा। सुनतहिं भयउ पर्वताकारा।।
कनक बरन तन तेज बिराजा। मानहु अपर गिरिन्ह कर राजा।।
सिंहनाद करि बारहिं बारा। लीलहीं नाषउँ जलनिधि खारा।।

सहित सहाय रावनहि मारी। आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी।।
जामवंत मैं पूँछउँ तोही। उचित सिखावनु दीजहु मोही।।
एतना करहु तात तुम्ह जाई। सीतहि देखि कहहु सुधि आई।।
तब निज भुज बल राजिव नैना। कौतुक लागि संग कपि सेना।।
छं0–कपि सेन संग सँघारि निसिचर रामु सीतहि आनिहैं।
त्रैलोक पावन सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानिहैं।।
जो सुनत गावत कहत समुझत परम पद नर पावई।
रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावई।।
दो0-भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहि जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करिहि त्रिसिरारि।।30(क)।।
सो0-नीलोत्पल तन स्याम काम कोटि सोभा अधिक।
सुनिअ तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग बधिक।।30(ख)।।
मासपारायण, तेईसवाँ विश्राम
— — — — — -

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने चतुर्थ सोपानः समाप्तः।
(किष्किन्धाकाण्ड समाप्त)